Journal Homepage: -www.journalijar.com
INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH (IJAR)
Article DOI:10.21474/IJAR01/8502
DOI URL: http://dx.doi.org/10.21474/IJAR01/8502
ISSN NO. 2320-5407

## RESEARCH ARTICLE

# नई दिल्ली से प्रकाशित प्रमुख हिन्दी समाचार पत्रों में भाषायी संदूषण.

**डॉ प्रमोद कुमार,** प्रमुख समाचार समन्वयक, आर्गेनाइजर साप्ताहिक, नई दिल्ली.

## Manuscript Info

***Manuscript History***
Received: 05 December 2018
Final Accepted: 07 January 2019
Published: February 2019

***Key words:-***
*गाँधी और भाषा*, *भाषायी संदूषण*, *भाषा में मिलावट*, *भाषा और संस्कार*, *भाषा एवं संस्कृति*, *भाषा एवं शब्दावली*, *न्यू मीडिया*.

## Abstract

गांधीजी ने भारतीय भाषाओं के पोषण, संरक्षण एवं संवर्धन का आग्रह इसलिए किया क्योंकि उन्हें मालूम था कि हमारी भाषाएं मात्र शब्दों, पदों, वाक्यों तथा व्याकरण के नियमों का संग्रह ही नहीं हैं, वे ज्ञान-विज्ञान, संस्कृति एवं संस्कारों की संवाहिकाएं भी हैं। भाषा में हर शब्द का अपना इतिहास एवं महत्व होता है और हर भाषा के साथ एक संस्कृति और समाज जुड़ा होता है। इसलिए उस समाज के संस्कारों की अभिव्यक्ति उस भाषा के माध्यम से ही होती है। भाषा में संदूषण से सामाजिक संस्कारों में भी खोट आता है। चूंकि साहित्य, संस्कार और पत्रकारिता में एक अभूतपूर्व रिश्ता है, इसलिए समाचार पत्रों की भाषा को लेकर बहुत सजग रहने की आवश्यकता है। उसमें अनावश्यक मिश्रण कई प्रकार के संकट पैदा करता है। भाषा में अपनी नयी शब्दावली का निर्माण अवश्य हो, लेकिन वह किसी विदेशी भाषा के प्रभाव में नहीं, बल्कि अपनी भारतीय भाषाओं के दायरे में ही होना चाहिए। पत्रकारिता प्रशिक्षण संस्थानों को भी इस सम्बन्ध में सजग रहने की जरूरत है ताकि पत्रकारिता की भावी पीढ़ी उन्हीं संस्कारों के साथ पेशे में उतरे।

*Copy Right, IJAR, 2019,. All rights reserved.*

**प्रस्तावना-:**

अंग्रेजी भाषा के अच्छे जानकार होने के बावजूद महात्मा गांधी भारतीय भाषाओं के प्रबल पक्षधर थे। उन्होंने भारतीय भाषाओं के संवर्धन की बात ही नहीं की, बल्कि उनके पोषण हेतु ठोस प्रयास किये। स्वयं गुजराती होते हुए भी उन्होंने हिन्दी सहित अनेक भारतीय भाषाएं सीखीं। हालांकि उनकी हिन्दी लिखावट और भाषा ज्ञान बहुत अच्छा नहीं था फिर भी वे हिन्दी (हिन्दी व उर्दू के मिश्रण से बनी 'हिन्दुस्तानी') में ही लिखना और संवाद करना पसंद करते थे। कांग्रेस कार्यकर्ताओं से वे भारतीय भाषाओं में ही संवाद करने का आग्रह करते थे और सार्वजनिक मंच पर बड़े नेताओं को भी अंग्रेजी में बात करने पर टोक दिया करते थे। वे कहते थे (गाँधी, 1946), "अपनी मातृभाषाओं के मुकाबले अंग्रेजी से ज्यादा मुरव्वत रखने के कारण आज हमारे पढ़े-लिखे और राजनीतिक दृष्टि से जागे हुए ऊंचे तबके के लोगों के साथ आम लोगों का रिश्ता बिल्कुल टूट गया है और उन दोनों के बीच एक गहरी खाई बन गई है। यही वजह है कि हिन्दुस्तान की भाषाएं गरीब बन गयी हैं और उन्हें पूरा पोषण नहीं मिला। हिन्दुस्तान की महान भाषाओं की जो अवगणणा हुई है उसकी वजह से हिन्दुस्तान को जो बेहद नुकसान पहुंचा है उसका अंदाजा हम नहीं निकाल सकते हैं। अगर आज तक हुए नुकसान का इलाज नहीं किया गया, यानी जो हानि हो चुकी है उसकी भरपाई करने की कोशिश हमने न की, तो हमारी आम जनता को मानसिक मुक्ति नहीं मिलेगी। वास्तव में 'नुकसान का इलाज' करने के लिए ही गांधीजी ने दक्षिण भारत में हिंदी प्रचारिणी सभा की स्थापना कर देश के उस हिस्से में भी हिन्दी के प्रति लगाव पैदा किया, जहां उसका काफी विरोध था। उन्होंने 1943 में लिखा, ''इस मोहिनी (अंग्रेजी) के वशीभूत होकर हम लोग हिंदुस्तान को अपने ध्येय की ओर आगे बढ़ने से रोक रहे हैं। जितने साल हम अंग्रेजी सीखने में बरबाद करते हैं उतने महीने भी अगर हम हिन्दुस्तानी सीखने की तकलीफ न उठायें तो सचमुच कहना होगा कि जन साधारण के प्रति अपने प्रेम की जो डींगें हम हांका करते हैं वे निरी डींगें ही हैं" (गाँधी, 1943)।

**शोध प्रविधि-:**

शोध पत्र मुख्य रूप से भारत की राजधानी नई दिल्ली से प्रकाशित 'नवभारत टाइम्स', 'अमर उजाला', 'दैनिक भास्कर' एवं 'दैनिक जागरण' के अक्टूबर 2018 के अंकों के अध्ययन और विशेषज्ञों से बातचीत पर आधारित है। अध्ययन के लिए समाचार पत्रों का चयन उनकी प्रसार संख्या को आधार मानकर किया गया। इस सम्बन्ध में पुस्तकों का भी अध्ययन किया गया और भाषायी विशेषज्ञों से भी बात की गयी। साथ ही माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता विश्वविद्यालय द्वारा वर्ष 2015 में नयी दिल्ली से प्रकाशित प्रमुख हिंदी समाचार पत्रों की भाषा पर किये गए एक लघु शोध का भी सन्दर्भ लिया गया।

**भाषायी संदूषण-:**

भाषायी संदूषण से अभिप्राय हिंदी समाचार पत्रों द्वारा अंग्रेजी शब्दों के अधिकाधिक प्रयोग के कारण भाषा में की जा रही मिलावट से है। गांधीजी भारतीय भाषाओं के पोषण की बात इसलिए करते थे क्योंकि उनका स्पष्ट मानना था कि हमारी भाषाएं मात्र शब्दों, पदों, वाक्यों और व्याकरण के नियमों का संग्रह नहीं हैं, वे संस्कारों की संवाहिकाएं हैं और हर शब्द का अपना इतिहास एवं महत्व होता है। परन्तु इसके विपरीत आज समाचार पत्रों एवं समाचार चैनलों में पहले से स्थापित एवं प्रचलित भारतीय भाषाओं के शब्दों को बाहर कर अंग्रेजी के शब्दों का चलन दिन-प्रतिदिन जोर पकड़ रहा है, जिससे भाषाविद् एवं साहित्यकार बेहद चिंतित हैं। देश में अंग्रेजी जानने वाले लोगों की संख्या दो प्रतिशत से भी कम है, लेकिन राष्ट्रीय राजधानी

**Corresponding Author:-**डॉ प्रमोद कुमार.

दिल्ली से प्रकाशित हिन्दी समाचार पत्रों में अंग्रेजी शब्दों की चौंका देने वाली घुसपैठ को देखकर लगता है मानों पूरा देश अंग्रेजी ही पढ़ता और अंग्रेजी में ही सोचता है। नई दिल्ली से प्रकाशित 'नवभारत टाइम्स' *(17 अक्टूबर, 2018)* के कुछ समाचारों के शीर्षक देखिए:

- जेडीयू में नितीश के डिप्टी बने प्रशांत किशोर (पृष्ठ-1)
- 14000 नये बस स्टैंड का डिजाइन होगा फाइनल (पृष्ठ-3)
- 100 करोड़ से ज्यादा का जुर्माना लगा चुका NGT (पृष्ठ-5)
- पुलिस ने प्रदर्शन में शामिल नजीब की मां को किया डिटेन
- लखनऊ पहुंची दिल्ली पुलिस, आशीष की लास्ट लोकशन बस्ती में मिली (पृष्ठ-4)
- बॉलीवुड के स्टंटमास्टर की देखरेख में मेघनाद वध (पृष्ठ-6)
- JNUSO की चेतावनी, GST नं दें वरना यूनियन खारिज (पृष्ठ-9)

इन शीर्षकों में न केवल अंग्रेजी शब्दों का देवनागरी में प्रयोग किया गया है, बल्कि कुछ अंग्रेजी शब्दों को रोमन लिपि में ही लिख दिया गया है। क्या 'नवभारत टाइम्स यह दावा कर सकता है कि उसके सभी पाठकों को अंग्रेजी का ज्ञान है? बात सिर्फ 'नवभारत टाइम्स' की नहीं है, बल्कि नई दिल्ली से प्रकाशित हिन्दी के तमाम दूसरे बड़े समाचार पत्र भी भाषायी दरिद्रता के मामले में पीछे नहीं हैं। 17 अक्टूबर, 2018 के ही कुछ अन्य समाचार पत्रों के शीर्षक देखिए:

- डिजिटल सेगमेंट में ग्रोथ से इन्फोसिस के प्रॉफिट में 10 प्रतिशत, रेवेन्यू में 17 प्रतिशत की बढ़ोतरी (पृष्ठ-11), दैनिक भास्कर
- पैरा एथलीट देश के असली आइकन (पृष्ठ-5), अमर उजाला
- 4जीबी रैम के साथ कूलपैड नोट 8 (पृष्ठ-14), अमर उजाला
- बीएससी के बाद बनें हिस्ट्री टीचर, (पृष्ठ-15), दैनिक जागरण
- मोबाइल वालेटों के बीच लेनदेन के लिए गाइडलाइन (पृष्ठ-12), दैनिक जागरण

'नवभारत टाइम्स' और 'दैनिक जागरण' ही नहीं, बल्कि 'हिन्दुस्तान', 'दैनिक भास्कर' आदि सभी प्रमुख समाचार पत्रों के प्रिंट संस्करणों में शुरू हुआ यह भाषायी संदूषण अब वेब संस्करणों में विकराल रूप धारण कर चुका है। भाषायी संदूषण की दृष्टि से इन समाचार पत्रों के वेब संस्करण एक दूसरे से प्रतियोगिता करते हुए नजर आते हैं। 'जनसत्ता', 'राष्ट्रीय सहारा', 'पंजाब केसरी', 'दैनिक जागरण', 'अमर उजाला' जैसे अखबार, जो प्रिंट संस्करणों में अक्सर हिन्दी की शुद्धता का ख्याल रखते हैं, वे अपनी वेबसाइटों पर अंग्रेजी शब्दों का खूब इस्तेमाल कर रहे हैं। बहुत से अंग्रेजी शब्दों को अब वे देवनागरी की बजाय रोमन लिपि में ही लिखने लगे हैं। हिन्दी समाचार पत्रों में आए इस आश्चर्यजनक बदलाव पर पिछले दिनों माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता विश्वविद्यालय द्वारा (एमसीएनजेयू, 2015) एक लघु शोध कराया गया, जिसमें नई दिल्ली से प्रकाशित आठ प्रमुख हिन्दी दैनिक समाचार पत्रों में नियमित रूप से प्रयुक्त होने वाले 500 शब्दों की सूची तैयार की गयी थी। उन 500 शब्दों में से 106 शब्द ऐसे थे जिनका हिन्दी समाचार पत्रों में प्रयोग सर्वथा अनुचित है क्योंकि उनके लिए हिन्दी में बेहतर और सरल शब्द उपलब्ध हैं। साथ ही 146 ऐसे शब्द पाये गये, जिनका प्रयोग इसलिए अनुचित है क्योंकि उनके सार्थक शब्द हिन्दी में उपलब्ध हैं। शेष शब्दों के बारे में कहा गया कि उनका उपयोग कुछ हद तक चल सकता है क्योंकि उनके लिए या तो हिन्दी शब्द हैं ही नहीं या फिर उनके लिए शब्द हिन्दी में प्रचलित नहीं हैं। जिन आठ समाचार पत्रों में से ये शब्द संग्रहित किये गये उनमें शामिल थे 'दैनिक भास्कर', 'दैनिक जागरण', 'नई दुनिया', 'अमर उजाला', 'जनसत्ता', 'हिन्दुस्तान', 'पंजाब केसरी' और 'दैनिक ट्रिब्यून'। अध्ययन के दौरान इन सभी पत्रों के 31 दिन के अंकों की पड़ताल की गई।

**संपादक अधिक दोषी-:**

इस भाषाई बदलाव पर टिप्पणी करते हुए वरिष्ठ पत्रकार वेद प्रताप वैदिक (वैदिक, 2018) कहते हैं: "मराठी अखबारों में बहुत कम ऐसे लोग हैं, जो अपनी भाषा में अंग्रेजी का प्रयोग धड़ल्ले से करते हों। उनके वाक्यों में कहीं-कहीं अंग्रेजी के शब्द आते जरुर हैं लेकिन वे ऐसे शब्द हैं, जो या तो अत्यंत लोकप्रिय हो गए हैं या फिर उनका अनुवाद करना ही कठिन है। लेकिन हिन्दी के बड़े-बड़े अखबारों को पढ़ते हुए लोग हैरत में पड़ जाते हैं। उनकी कई खबरों में ऐसे वाक्य ढूंढना मुश्किल हो जाता है, जो आसानी से समझ में आ जाएं। इनमें अंग्रेजी के ऐसे शब्द चिपका दिए जाते हैं, जिनका अर्थ समझना ही आम पाठकों के लिए मुश्किल होता है। इसका अर्थ यह नहीं कि समाचार कक्ष में बैठे पत्रकार अपनी भाषा को भ्रष्ट करने पर उतारु हैं। वे भी चाहते हैं कि सरल भाषा लिखी जाए, लेकिन वे जल्दबाजी में उलटा काम कर बैठते हैं। कौन शब्दकोश देखे, कौन किसी वरिष्ठ से पूछे, कौन आपस में चर्चा करे। इसके अलावा अखबारों के संपादकों और मालिकों की ओर से भी कोई आपत्ति नहीं होती। अखबार बिक रहा है, इसी से वे संतुष्ट हैं।'' अधिकतर संपादकों के बारे में आजकल एक धारणा ये भी बन रही है कि वे संपादक की भूमिका में कम और 'पी.आर. पर्सन' की भूमिका में अधिक रहते हैं और अख़बार के लिए उनके पास समय बचता ही नहीं।

देश की प्रमुख समाचार एजेंसी 'पीटीआई-भाषा' में प्रमुख समाचार समन्वयक मनोहर सिंह (सिंह, 2018) इस बदलाव से बेहद चिंतित हैं। वे बताते हैं कि उनके साथ काम करने वाले तमाम नवोदित पत्रकार अंग्रेजी मिश्रित हिन्दी ही लिखते हैं लेकिन वे हर किसी को टोककर अपनी तरफ से पूरा प्रयास करते हैं कि हिन्दी समाचारों में अंग्रेजी के शब्द न जाएं। यही कारण है कि 'भाषा' से जारी होने वाले अधिकतर समाचार आज भी जनसामान्य की समझ में आने वाली हिन्दी में ही होते हैं। मनोहर सिंह का मानना है कि ''हिन्दी समाचार पत्रों में भाषायी संदूषण की समस्या इसलिए पैदा हुई क्योंकि समाचार कक्ष में बैठे संपादकों का जनसामान्य से सरोकार समाप्त हो गया है। उन्हें इस बात की गलतफहमी है कि वे जो सोचते हैं वही जनसामान्य सोचता है। यदि संपादक न चाहे तो कैसे किसी भी समाचार में जन सामान्य की समझ में न आने वाले शब्द जा सकते हैं। कमी संपादकों के स्तर ही है।"

हिन्दी में बढ़ते अंग्रेजी शब्दों के चलन को देखकर प्रश्न उठता है कि क्या हिन्दी वाकई इतनी लंगडी-लूली है, जिसमें शब्द ही नहीं हैं। लखनऊ से प्रकाशित 'राष्ट्रधर्म' के पूर्व संपादक आनन्द मिश्र 'अभय' (अभय, 2018) इससे सहमत नहीं हैं। वे कहते हैं ''अंग्रेजी प्रेम का प्रमुख कारण यह है कि आजकल के हिन्दी संपादकों को ही भाषा ज्ञान नहीं है। 1948 में जब हिन्दी सरकारी कामकाज की भाषा बनी तो लोग उस समय बहुत अच्छी हिन्दी का प्रयोग करने लगे थे और उसमें संस्कृतनिष्ठ शब्दों का प्रयोग होता था। वह हिन्दी चल निकली थी। लेकिन बाद में पंड़ित नेहरू के हस्तक्षेप के कारण भाषा का सत्यानाश हो गया। अंग्रेजी आएगी तो वह अपने साथ अपनी संस्कृति लेकर आएगी ही। उर्दू आई तो अरबी और फारसी उसके साथ आ गयीं। भाषा के साथ उसके धार्मिक प्रतीक और संस्कृति आते ही हैं। एक समय था जब संपादक स्वयं भाषा ज्ञान पर आग्रह करते थे, परन्तु वह आग्रह आज समाप्त सा हो गया है। दूसरे आज पत्रकारिता

प्रशिक्षण संस्थानों में भी भाषा की शुद्धता सिखाने पर ध्यान बिल्कुल नहीं है। फिर नवोदित पत्रकारों से भाषा की शुद्धता की अपेक्षा कैसे की जा सकती है?'' वरिष्ठ पत्रकार एवं 'दैनिक जागरण' के पूर्व सहयोगी संपादक डा रवीन्द्र अग्रवाल (अग्रवाल, 2018) भी मानते हैं कि भाषायी दृष्टि से दरिद्र लोग ही अपनी कमियों को छुपाने के लिए अपनी भाषा के स्थापित शब्दों को छोड़कर दूसरी भाषा के ऐसे शब्दों को स्थापित करने पर उतारू हैं जिसे सर्वसाधारण समाज नहीं जानता। वे कहते हैं, ''तर्क दिया जाता है कि युवाओं की आधुनिक भाषा-शैली में ही संवाद करने के लिए वे ऐसा कर रहे हैं लेकिन यह शोध का प्रश्न है कि कितने युवा आजकल समाचार पत्र पढ़ते हैं? हमारी भाषाएं बहुत समृद्ध हैं उन्हें छोड़कर आप विदेशी भाषा के पीछे भाग रहे हैं। सच्चाई यह है कि भाषा से ही देश की संस्कृति एवं संस्कार झलकते हैं। यदि हम 'मर्यादा पुरुषोत्तम राम' को 'बादशाह राम' लिखने लगेंगे तो क्या वह संदेश हम दे पाएंगे जो हम देना चाहते हैं? यदि हम हर की पौड़ी के गंगाजल को 'गंगा का पानी' लिखेंगे तो वह संदेश जाएगा ही नहीं। शब्द संस्कारित करते हैं और उन संस्कारों को सभी लोगों तक पहुंचाने का काम करते हैं। इसलिए भाषायी मामले में हमें दरिद्र नहीं होना चाहिए। हमारे पास शब्दों की कमी नहीं है। अपनी भाषा को विस्थापित करना बुद्धिमत्ता नहीं है। हिन्दी के कुछ अखबार एवं विद्वान कुछ अखबारों की उस शैली की प्रशंसा करते हैं जिसमें वे अंग्रेजी के शब्द अब रोमन लिपि में लिखते हैं। यदि यह चलन इतना ही अच्छा है तो वे अंग्रेजी अखबारों में हिन्दी शब्दों का प्रयोग देवनागरी लिपि में करके दिखाएं?''

**भाषा के हत्यारे अख़बार-:**

भाषा को प्रदूषित करने में टेलीविजन न्यूज चैनलों एवं फिल्मों की भी कम भूमिका नहीं है। 'ज़ी न्यूज' व 'आजतक' में काम कर चुके सुप्रसिद्ध फिल्मकार डा चन्द्रप्रकाश द्विवेदी (द्विवेदी, 2018) भी भाषा के इस भ्रंश से चिंतित हैं। वे कहते हैं, ''समस्या यह है कि आजकल न्यूज चैनल्स भाषा पर नहीं 'कम्यूनिकेशन' पर जोर देते हैं। इसके कारण आज भाषा के सौन्दर्य बोध की हत्या हो रही है जिसे बचाना बहुत जरूरी है। यदि हम आज इसके लिए लड़ाई शुरू करेंगे तो उसके परिणाम 40 साल बात दिखने शुरू होंगे। इसके जिए जो अखबार भाषा की हत्या पर तुले हैं उन्हें ही सही मार्ग पर चलना होगा।' दिल्ली विश्वविद्यालय के शिक्षा विभाग से स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति लेकर अपना पूर्ण समय संस्कृत भाषा के प्रचार-प्रसार में लगाने वाले प्रोफेसर चांदकिरण सलूजा (सलूजा, 2018) भाषा के साथ हो रहे इस खिलवाड़ से बहुत आहत हैं। वे कहते हैं: ''भाषा मूलतः संस्कृति का ही अंग है। हर शब्द का अपना एक इतिहास एवं महत्व होता है और भाषा के साथ सार्थक्य जुड़ा हुआ है। भाषा विचार की प्रतिपादक होती है। हर शब्द कहीं न कहीं एक विचार को बताता है। शब्दों के साथ उनका अपना एक अर्थ जुड़ा हुआ है और वह अर्थ इतिहास से निकलकर आता है। इसका सबसे सुंदर उदाहरण हैं मुहावरे और लोकोक्तियां। 'भगीरथ प्रयास' बड़े प्रयास के लिए प्रयुक्त होता है लेकिन वह पवित्रीकरण और कल्याण के भाव में ही हो सकता है, दुष्ट कर्म के लिए नहीं। श्रवण कुमार की घटना श्रवण कुमार की नहीं, बल्कि माता-पिता की सेवा की घटना है। इसलिए भाषा के साथ इतिहास जुड़ा हुआ है। जो समाचार पत्र आज भाषा को भ्रष्ट कर रहे हैं मैं पाठकों को सलाह देना चाहता हूं कि वे उन्हें पढ़ना तुरंत बंद कर दें।" वे आगे कहते हैं, "वर्षों के निरीक्षण के बाद जो सारत्व निकलता है भाषा उसी सारत्व की प्रवाहिका है। ये तत्व शास्वत होते हैं और शास्वत तत्व ही संस्कृति का अंग बनते हैं। माध्यम उसका भाषा होती है। भाषा के दो कार्य हैं। एक, उन अनुभवों को संग्रहित करके रखना और बाद में उन्हें आने वाली पीढ़ियों को प्रदान करना। इसलिए सार्थक शब्दों का प्रयोग ही पत्रकारिता का उद्देश्य होना चाहिए। हम यह मानते हैं कि समाज में सभी लोगों का स्तर समान नहीं होता। इसलिए पत्रकारिता में सरल और सकारात्मक भाषा का प्रयोग होना चाहिए। पत्रकारों के शिक्षण-प्रशिक्षण व पाठ्यक्रम में भी भाषा का प्रश्न शामिल किया चाहिए।"

दिल्ली विश्वविद्यालय में संस्कृत विभाग के पूर्व विभागाध्यक्ष प्रो. रमेश चन्द्र भारद्वाज (भारद्वाज, 2018) सभी भारतीय भाषाओं के संस्कृत से संबंध पर गौर करने की सलाह देते हैं। संस्कृत भारत में हजारों-हजार साल के हमारे ज्ञान-विज्ञान के चिंतन की संवाहिका है। भारतीय भाषाओं ने संस्कृत की शब्द निर्माण की अद्भुत क्षमता व शक्ति का उपयोग किया। गुजराती, मराठी आदि सभी भाषाओं में संस्कृत व्याकरण, धातुओं और प्रत्ययों से नये-नये शब्द बनाकर भाषा में जोड़े गये। इसलिए बिना संस्कृत के भारतीय भाषाएं पंगु हैं। आज जब भारतीय भाषाओं में शिक्षा की बात की जाती है तो भारतीय भाषाओं के अखबार ही उसका अधिक विरोध करते हैं। इसका कारण यह है कि आज जो लोग पत्रकारिता में हैं उन्हें भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों के विधायक तत्वों का पता ही नहीं है। इस्रायल भारत के बाद स्वतंत्र हुआ। उनकी भाषा 'हिब्रू' समाप्त हो गयी थी, जिसे उन्होंने फिर से जिंदा किया। आज वहां 16 से अधिक नोबेल पुरस्कार विजेता हैं लेकिन उन्हें अंग्रेजी नहीं आती। जर्मनी तकनीक के मामले में शिखरस्थ देश है, लेकिन वहां सारा काम जर्मन भाषा में ही होता है। फ्रांस भी अंग्रेजी का इस्तेमाल नहीं करता। फिर हम किस हीनभावना का शिकार हैं?''

**जमीन ही बंजर होगी तो शब्द कहाँ से आयेंगे?**

भाषायी संदूषण से जहां अधिसंख्य भाषाविद् चिंतित हैं वहीं समाचार पत्र जगत का एक वर्ग इसका समर्थन भी करता हुआ दिखाई देता है। वरिष्ठ पत्रकार एवं माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता विश्वविद्यालय के उपकुलपति जगदीश उपासने (उपासने, 2018) पूछते हैं: "जब हर व्यक्ति अपने बच्चों को अंग्रेजी ही पढ़ाना चाहेगा तो फिर भारतीय भाषाएं कैसे बचेंगी? भाषा संस्कारों एवं संस्कृति के साथ बदलती है। जब जीवन शैली, पहनावा, खानपान व व्यवहार के तरीके बदलते हैं तो वे भाषा के माध्यम से परिलक्षित होते हैं। भाषा में बदलाव का मतलब है कि नीचे जो बदलाव हुए हैं वे गहरे हो गये हैं। कुछ लोग कहते हैं कि आजकल भाषा संदूषित हो गयी है। यदि आप बच्चों को शिक्षा ही अंग्रेजी में दे रहे हैं, अधिक से अधिक अंग्रेजी माध्यम के स्कूल खुल रहे हैं, गरीब से गरीब व्यक्ति भी अपने बच्चों को अंग्रेजी माध्यम के स्कूलों में ही पढ़ाना चाहता है तो अंग्रेजी का कुछ तो असर बच्चों पर होगा ही। वे अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग करेंगे ही। इससे पहले मुगल काल में उर्दू और फारसी का अत्यधिक प्रभाव था। क्योंकि उस समय वही भाषा मदरसों में पढ़ायी जाती थी और लोगों को उन्हीं भाषाओं का इस्तेमाल आसान लगता था। आज यदि हमारी भाषा कमजोर होती दिख रही है तो इसका मतलब है कि हम अपनी भाषा का संस्कार नहीं दे पा रहे हैं। हम खुद उसे कमजोर कर रहे हैं। अवधी, भोजपुरी आदि बोलियां एवं क्षेत्रीय भाषाएं सहज भाव से उपजी हैं। वहां व्यवहार व अनुभव से शब्द बने हैं और उनका प्रयोग होता है। हिन्दी में ऐसा नहीं है। हिन्दी में समानार्थी शब्द बनाये गये हैं। हिन्दी में जो शब्द मौलिक लगते हैं वे या तो बोलियों के हैं या फिर क्षेत्रीय भाषाओं के। डा रघुवीर ने हजारों शब्द बनाये। वे प्रचलन में हैं लेकिन वे सभी कृत्रिम शब्द हैं। मराठी, बंगला, कन्नड़ प्रदूषित नहीं हुई, फिर हिन्दी कैसे प्रदूषित हो गयी? यह हिन्दी की अपनी कमजोरी है। इस कमजोरी को कैसे दूर किया जाए यह चुनौती है। भाषा को मीडिया ने भ्रष्ट नहीं किया है। आज से पचास साल पहले अखबार जो भाषा प्रयोग करते थे उस दौर में वह भाषा समझी जाती थी। आज जो भाषा इस्तेमाल हो रही है आज वही जनसामान्य द्वारा समझी जाती है। जब हम बोलचाल में ही अंग्रेजी के इतने शब्दों का इस्तेमाल करते हैं तो मीडिया में उस भाषा का इस्तेमाल क्यों न हो? आखिर मीडिया उसी भाषा का इस्तेमाल तो करेगा, जिसे जनसामान्य समझता है। आज के बच्चों को हिन्दी ठीक से लिखनी तक नहीं आती। ऐसे में यदि उन्हें कठिन शब्द पढ़ाने शुरू कर दें तो वे कुछ नहीं समझेंगे। शब्द बीज की तरह होते हैं। वे उसी जगह बोये जाएंगे, जहां उनके अनुकूल जमीन तथा हवा, पानी है। आप जबर्दस्ती लोगों को शब्द नहीं पढ़ा सकते। जब आपने जमीन को ही बंजर बना दिया है तो आप मीडिया से कैसे उम्मीद करते हैं कि वह संस्कृतनिष्ठ या शुद्ध हिन्दी शब्द चलाएं।"

समीर पंत (पंत, 2013) अपनी पुस्तक 'अच्छी हिन्दी कैसे लिखें ?' में कहते हैं: ''हिन्दी का मूल स्वभाव देखें तो इसके असल सगे संबंधी यहां के वातावरण में पनपी भाषाएं-बोलियां ही हो सकती हैं। जबकि अंग्रेजी की जगह दूर के रिश्तेदार से अधिक की नहीं बनती। जो लोग हिन्दी का हाजमा अंग्रेजी से कमजोर समझते हैं वे भ्रम में हैं और हिन्दी का हाजमा बढ़ाने के चक्कर में उसकी सेहत बर्बाद कर रहे हैं।'' विशेषज्ञों का मानना है कि बाजार के इशारे पर ही हिन्दी की हिंग्रेजी या हिंग्लिश बनायी जा रही है। बाजार चाहता ही नहीं कि समाज किसी गंभीर विमर्श की

बात कभी सोचे। बाजार को चाहिए उपभोक्ता और वह भी अधिकतर गैरजरूरी चीजों का। उपभोक्तावादी प्रवृत्ति की अनिवार्य शर्त है कि विवेक कमजोर पडे, संस्कार बिगडें। इस साजिश में भारतीय समाचार पत्र बाजार की कठपुतली बन गये हैं।

हम अपने ही देश में भले ही अपनी भारतीय भाषाओं को नजरंदाज करने लगे हों लेकिन इसे लेकर अमेरिकी कम्पनी गूगल को कोई संदेह नहीं है। अप्रैल 2017 में गूगल ने केपीएमजी (गूगल-केपीएमजी 2017) के साथ मिलकर भारतीय भाषाओं के संदर्भ में एक अध्ययन कराया, जिसकी रिपोर्ट में कहा गया है कि वर्ष 2011 में इंटरनेट इस्तेमाल करने वाले भारतीयों में चार करोड़ बीस लाख भारतीय भाषाओं के जानकार थे और 6.8 करोड़ अंग्रेजी के जानकार थे। परन्तु वर्ष 2016 तक ये आंकड़ा बदल गया। उस वर्ष भारतीय भाषाओं में इंटरनेट इस्तेमाल करने वाले लोगों की संख्या 23.4 करोड़ हो गयी, जबकि अंग्रेजी जानने वालों की संख्या 17.5 करोड़ रही। अध्ययन में बताया गया कि अंग्रेजी भाषा में अब बढ़ोतरी की संभावनाएं लगभग समाप्ति की ओर हैं। 18 प्रतिशत की वृद्धि दर के साथ 2021 तक 53.6 करोड़ भारतीय इंटरनेट का इस्तेमाल भारतीय भाषाओं में ही करेंगे, जबकि अंग्रेजी की वृद्धि दर 3 प्रतिशत से भी कम रहने की संभावना है। रिपोर्ट में यह भी कहा गया है की 2021 तक 10 में से 9 इंटरनेट उपभोक्ता भारतीय भाषाओं के होंगे।

**समाधान-:**

हिन्दी समाचार पत्रों में उत्पन्न हुए इस भाषायी संदूषण से कैसे मुक्ति मिले? प्रो. चांदकिरण सलूजा पत्रकारों के शिक्षण-प्रशिक्षण व पाठ्यक्रम में भाषा का प्रश्न शामिल करने की जरूरत पर जोर देते हैं। डा रमेश चन्द्र भारद्वाज का मत है कि जिन मूल्यों को लेकर भारत में पत्रकारिता प्रारंभ हुई थी उनकी पुनस्थापना की जानी चाहिए। डा रवीन्द्र अग्रवाल का सुझाव है कि भाषायी मामले में हमें दरिद्र नहीं होना चाहिए। हमारे पास शब्दों की कमी नहीं हैं। अपनी भाषा को विस्थापित करना बुद्धिमत्ता नहीं है। आनन्द मिश्र 'अभय' की राय में ''ठीक करने का एक ही तरीका है कि हम अपनी भाषा के शब्दों का प्रयोग करें और नए शब्द भारतीय भाषाओं के दायरे में ही गढें।'' वेद प्रताप वैदिक कहते हैं कि ''जिन समाचार पत्रों में भाषायी संदूषण सर्वाधिक है उन्हीं समाचार पत्रों के संपादकीयों और लेखों में सरल और शुद्ध हिंदी के शब्द दिखायी देते हैं। इसलिए यदि संपादक थोड़ा ध्यान दें तो हिंदी के अखबारों का प्रभाव भी बढ़ेगा और पाठक संख्या भी। हिन्दी संस्कृत की बेटी है। उसके शब्द-सामर्थ्य का क्या कहना? संस्कृत की एक धातु में हजारों नए शब्द बनते हैं और उसकी धातुएं 2000 हैं। पत्रकार भाई अपनी इस छिपी हुई ताकत को समझें और थोड़ी मेहनत करें तो हिन्दी को संदूषित होने से बचा सकते हैं।" जगदीश उपासने का मानना है कि ''कम से कम स्कूल स्तर तक तो हम मातृभाषा में ही बच्चों को पढ़ाएं और मीडिया को दोष देने की बजाए यदि समाज समृद्ध भाषा पढ़ने वाले पाठक खड़े करता है तो मीडिया को बदलना ही पड़ेगा।''

**निष्कर्ष-:**

अध्ययन से पता चलता है कि अंग्रेजी के 255 शब्द ऐसे हैं जिनका बार-बार प्रयोग होता है। इसके लिए दो तरह की मानसिकताएं काम कर रही हैं। एक मानसिकता है कि पाठक इस संदूषित भाषा को अधिक समझते हैं और वे शेष शब्दावली नहीं जानते हैं। दूसरी मानसिकता यह है कि लोगों की मानसिकता बदलो। हिन्दी समाचार पत्र उच्च श्रेणी के लोग बहुत कम पढ़ते हैं। इस भाषायी संदूषण में ध्यान देने योग्य बात यह है कि अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग वाक्य रचना की दृष्टि से नहीं शाब्दिक दृष्टि से है। इस समस्या का जनक है 'नवभारत टाइम्स' जो समाचारों से अधिक विज्ञापनों यानि शुद्ध लाभ के लिए छपता है। लेकिन गौर करने लायक तथ्य यह भी है कि जब से इस अखबार ने अपनी भाषा को संदूषित किया है तब से इसका प्रसार तेजी से घट रहा है। ऑडिट ब्यूरो ऑफ सर्कुलेशन गत कुछ वर्षों के आंकड़े (एबीसी, 2018) इसके गवाह हैं। कुछ वर्षों से एबीसी की सूची में 'नवभारत टाइम्स' को निचले पायदान पर भी स्थान नहीं मिल रहा है। राष्ट्रहित, जनहित और समाज हित की बजाए जब व्यापार हित सर्वोपरि हो जाता है तो भाषा एवं मूल्यों को ठेस पहुंचती ही है। भाषायी संदूषण की समस्या का अन्य पहलू यह है कि आजकल पत्रकारिता प्रशिक्षण संस्थानों से जो बच्चे पढ़कर निकल रहे हैं, उन्हें कम पैसे पर रखा जाता है। उन्हें भाषा सिखाने की बजाए उनसे उसी भाषा में काम कराया जाता है जो उन्हें आती है। जब विज्ञापन महंगे दामों पर और कर्मचारी सस्ते दामों पर लिए जाते हैं तो यही स्थिति बनती है। यह नये तरह की पीत पत्रकारिता है। चिंताजनक बात यह है कि जिन शब्दों का अंग्रेजी में प्रयोग हो रहा है उनके हिन्दी पर्याय बहुत सरल हैं। आज हम अपनी उस भाषा को संदूषित करने पर तुले हैं जो देश में राष्ट्रीय संपर्क भाषा बनकर उभरी है। यह एक गंभीर मुद्दा है जिस पर सिर्फ समाचार पत्रों ही नहीं, बल्कि संपूर्ण समाज को आत्ममंथन करके ठोस पहल करनी चाहिए। पत्रकारिता आमजन से संवाद का माध्यम है, इसलिए इसकी भाषा पूरी तरह परिष्कृत और परिमार्जित होनी चाहिए। भाषा में नयी शब्दावली का निर्माण अवश्य हो, लेकिन वह भारतीय भाषाओं के दायरे में ही होना चाहिए, किसी विदेशी भाषा के दायरे में नहीं।

**संदर्भ-:**


1. गाँधीजी. (1946). रचनात्मक कार्यक्रम: उसका रहस्य और स्थान (तीसरा संस्करण). नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद
2. गाँधीजी. (1943). रचनात्मक कार्यक्रम: उसका रहस्य और स्थान (द्वितीय संस्करण). नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद
3. नवभारत टाइम्स. नई दिल्ली, 17 अक्टूबर, 2018
4. वैदिक, वेद प्रताप. (2018). हिंदी अखबारों की भ्रष्ट भाषा. नई दुनिया, 23 जनवरी, 2018, retrieved on October 15, 2018 from https://www.nayaindia.com/vaidik-column/hindi-newspaper-corrupt-language.html
5. दैनिक जागरण. नई दिल्ली, 7 नवम्बर, 2016
6. एमसीयूएनजेयू रिपोर्ट (2015). माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता विश्वविद्यालय भोपाल
7. सिंह, मनोहर. (2018). साक्षात्कार. 12 अक्टूबर, 2018 को नई दिल्ली में साक्षात्कार
8. अभय, आनंद मिश्र. (10 अक्टूबर, 2018 ). पूर्व संपादक, राष्ट्रधर्म. लखनऊ से दूरभाष पर साक्षात्कार
9. अग्रवाल, रवीन्द्र. (14 अक्टूबर, 2018). वरिष्ठ पत्रकार. नई दिल्ली में साक्षात्कार
10. द्विवेदी, चंद्रप्रकाश. (8 नवम्बर, 2018). फ़िल्मकार. नई दिल्ली स्थित इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय कला केंद्र में साक्षात्कार
11. सलूजा, चाँद किरण. (18 अक्टूबर, 2018 ). पूर्व प्रो. शिक्षा विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय. नई दिल्ली में साक्षात्कार
12. भारद्वाज, रमेशचंद. (13 अक्टूबर, 2018). निदेशक, गाँधी भवन, दिल्ली विश्वविद्यालय. नई दिल्ली में साक्षात्कार
13. उपासने, जगदीश. (13 अक्टूबर, 2018). दूरभाष पर साक्षात्कार
14. पन्त, समीर. (2013). अच्छी हिंदी कैसे लिखें? प्रभात प्रकाशन. नई दिल्ली, प्रष्ठ 49-50
15. गूगल-केपीएमजी सर्वे रिपोर्ट. (2017). Retrieved on October 15, 2018 from https://assets.kpmg.com/content/dam/kpmg/in/pdf/2017/04/Indian-languages-Defining-Indias-Internet.pdf
16. एबीसी रिपोर्ट. (2018). Retrived on October 18, 2018 from http://www.auditbureau.org/files/JJ2018%20Highest%20Circulated%